क्या कोई अमीरी रेखा भी बननी चाहिये?

व्यक्ति दो प्रकार के होते हैं 1 शरीफ 2 अपराधी। शरीफ को प्राचीन काल मे देव तथा अपराधियों को राक्षस कहा जाता था। वर्तमान समय मे इन्ही दोनो को सामाजिक तथा समाज विरोधी कहा जाता है। सामाजिक व्यक्ति को समाज का अंग और समाज विरोधी को समाज बहिष्कृत माना जाता है। इन दोनो के बीच भी एक वर्ग होता है, जो पूरी तरह किसी परिभाषा मे नही होता, उसे असामाजिक कहा जाता है। इस तरह असामाजिक और समाज विरोधी बिल्कुल अलग अलग होते है जिन्हे आम तौर पर एक समझने की गलती हो जाया करती है।

व्यक्ति को तीन प्रकार के अधिकार होते है। 1 मौलिक 2 संवैधानिक 3 सामाजिक। मौलिक अधिकार प्रकृति प्रदत होते है, जिनमे राज्य अथवा समाज आपराधिक क्रिया के अतिरिक्त कभी कोई कटौती नहीं कर सकता। संवैधानिक अधिकार राज्य व्यवस्था द्वारा कभी भी दिये भी जा सकते है और लिये भी जा सकते है। सामाजिक अधिकार व्यक्ति को समाज द्वारा दिये जाते है तथा कभी भी समाज द्वारा लिये भी जा सकते है। इसी तरह व्यक्ति की भी सीमाएं है। किसी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति के मौलिक अधिकारो पर आक्रमण अपराध, संवैधानिक अधिकारो का अतिक्रमण गैर कानूनी तथा सामाजिक अधिकारो की अन्देखी अनैतिक कार्य माना जाता है। भारत के संविधान निर्माताओं मे इन अधिकारो का ठीक ठीक वर्गीकरण तथा विश्लेषण करने की क्षमता का अभाव ही आज पैदा अनेक समस्याओं का कारण है। दुर्भाग्य से आज भी हमारे मार्ग दर्शक इस वर्गीकरण को ठीक से नही समझ पा रहे। मौलिक अधिकारों की सुरक्षा राज्य का दायित्व होता है, कानूनी मार्ग नहीं जबकि संवैधानिक अधिकार देना राज्य का संवैधानकि कर्तब्य होता है, दायित्व नहीं। सामाजिक अधिकार देने या न देने मे राज्य कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता । सिर्फ सलाह तक दे सकता है या स्वैच्छिक कर्तब्य मानकर सहायक हो सकता है। किसी भूख से मरने वाले को मरने से बचाना राज्य का संवैधानिक कर्तब्य मात्र होता है दायित्व नहीं । इसी तरह आत्महत्या को रोकना भी राज्य का दायित्व नही होता । किन्तु किसी की हत्या या दुर्धटना मृत्यु मे यथा संभव सुरक्षा देना राज्य का दायित्व होता है। दायित्व और कर्तब्य मे यह अन्तर होता है कि दायित्व के लिये आप वाध्य होते है और दायित्व न पूरा करने पर पीडित पक्ष आपकी व्यवस्था के विरूद्ध समाज तथा न्यायालय तक जाकर आपको वैसा करने को मजबूर कर सकता है। जबकि संवैधानिक या सामाजिक अधिकारो की पूर्ति मे व्यक्ति या न्यायालय संवैधानिक व्यवस्था को मजबूर नही कर सकता। वर्तमान स्थिति इतनी विचित्र है कि हमारी न्यायपालिका के सर्वोच्च लोग भी दायित्व और कर्तब्य के बीच फर्क नही समझ पाते । उन्हे तो सिर्फ किताबी शिक्षा की सीमा तक बंधे रहने के कारण कभी कभी मौलिक संवैधानिक और सामाजिक अधिकारो तक का अंतर समझ मे नही आता।

आर्थिक विषमता कम करना तथा गरीबी हटाना राज्य का कर्तब्य मात्र होता है, दायित्व नहीं जबकि आम तौर पर इस कार्य को दायित्व कहकर प्रचारित किया जाता है और कभी कभी तो इसे राज्य की सर्वोच्च प्राथमिकता तक कह दिया जाता हैं जबकि व्यक्ति के मौलिक अधिकारो की सुरक्षा राज्य की सर्वोच्च प्राथमिकता होती है। यदि वर्तमान समय का आकलन करें तो सुरक्षा और न्याय जैसे दायित्व पूरे करने मे राज्य पूरी तरह असफल है और अपनी असफलता को छिपाने के लिये आर्थिक असमानता दूर करने को पहली प्राथमिकता घोषित करके समाज को धोखा देने की कोशिश करता है। राज्य का विश्व स्तर का भी और खास कर भारत की राज्य व्यवस्था का भी यही चरित्र रहा है कि वह पहले समस्याओ को पैदा करती है और बाद मे उक्त समस्या के समाधान की पहल करती है। स्पष्ट है कि भारत मे आर्थिक विषमता स्वतंत्रता के बाद की गलत नीतियों का परिणाम है जो अर्थ नीति मे सुधार मात्र से कम हो सकती है, किसी प्रशासनिक कानून से नहीं । राज्य का सैद्धान्तिक स्वरूप यह होता है कि उसे सामाजिक समस्याओ का सामाजिक, प्रशासनिक का प्रशासनिक तथा आर्थिक का आर्थिक सीमाओ मे रहकर ही समाधान खोजना चाहिये किन्तु सत्ता के केन्द्रीयकरण के भूखे राजनेता तथा उनके सहयोगी प्रशासनिक समस्याओ का आर्थिक तथा आर्थिक समस्याओ का प्रशासनिक समाधान खोने का प्रयास करते हैं। आज भारत मे ऐसे लोगो की कमी नही जो नक्सलवाद का समाधान आर्थिक विकास और आर्थिक समस्याओ का समाधान छीनकर बांटने जैसी प्रशासनिक समस्या से करना चाहते हैं। एक भी राजनेता कभी भूलकर भी यह नही कहता कि सत्ता का सीमा रहित केन्द्रीयकरण घातक है। इसके विपरीत हर नेता पहली प्राथमिकता मे आर्थिक विषयों की ही चर्चा करता है। क्योकि इस चर्चा मे उसे अप्रत्यक्ष रूप से सत्ता के केन्द्रीयकरण की उम्मीद छिपी रहती है। वर्तमान के सभी राजनेता तो ऐसा प्रयत्न करते ही रहते है किन्तु डाक्टर राम मनोहर लोहिया तक ने भी आर्थिक समस्याओ के समाधान के लिये राज्य को अधिक शक्तिसम्पन्न होने की आवश्यकता बनाने की पहल की थी। इंदिरा जी ने तानाशाह बनने के लिये ही गरीबी हटाओ और राष्टीयकरण जैसे नारे उछाले थे। आज भी हर नेता, चाहे वह बिल्कुल सडक छाप ही क्यो न हो, आर्थिक समस्याओ के प्रशासनिक समाधान की बात करता है।

व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओ की पूर्ति के तीन माध्यम है। 1 श्रम 2 बुद्धि 3 धन । श्रम और बुद्धि के परिणाम का परिवर्तित स्वरूप ही धन होता है तथा धन का परिवर्तित स्वरूप सम्पत्ति होती है। श्रम या बुद्धि के परिणाम को किसी अन्य माध्यम से संचित नही किया जा सकता, जबकि वृद्धावस्था अथवा विशेष काल के लिये धन संचय की आवश्यकता होती है। श्रम की उत्पादन क्षमता बहुत कम होती है जबकि बुद्धि की श्रम की अपेक्षा कई गुना ज्यादा । बुद्धि के साथ संग्रहित धन भी जुड जाता है, तब इन दोनो की उत्पादन क्षमता असीम जो जाती है। वैसे भी श्रम प्रधान, बुद्धि प्रधान और धन प्रधान की उत्पादन क्षमता मे स्वाभाविक रूप से भी बहुत फर्क होता है। श्रम प्रधान व्यक्ति के पास मुख्य रूप से श्रम ही प्रमुंख माध्यम होता है जबकि बुद्धि प्रधान के पास श्रम भी रहता है तथा बुद्धि भी और धन प्रधान के पास धन, बुद्धि और श्रम तीनो एक साथ सहायक हो जाते हैं। यही कारण है कि तीनों की उत्पादन क्षमता अलग अलग होती है। वैसे ही श्रमजीवी प्राकृतिक रूप से धन के मामले मे बहुत कमजोर और सहायता का पात्र होता है किन्तु जब बुद्धि प्रधान तथा धन प्रधान लोग श्रम शोषण के उददेश्य से श्रम के साथ छल करने लगें तब विकट स्थिति उत्पन्न हो जाती है। देश की सम्पूर्ण राजनैतिक आर्थिक व्यवस्था में श्रमजीवियों का प्रतिनिधित्व शून्य होता है। यदि कोई ग्रामीण श्रमजीवी राजनीति मे जाने मे सफल हुआ तो चुनाव जीतते ही वह तत्काल बुद्धिजीवी बन जाता है। अब वहां जाकर वह श्रमजीवी बुद्धिजीवीयों पूंजीपतियों के साथ मिलकर श्रमशोषण तथा ग्रामीण अर्थ व्यवस्था के विरूद्ध सोचना शुरू कर देता है। कृत्रिम उर्जा श्रम की प्रतिस्पर्धी तथा बुद्धिजीवी पूंजीपति के विस्तार मे सहायक होती है। सभी बुद्धिजीवी पूंजीपति किसी न किसी रूप मे सस्ती कृत्रिम उर्जा की तिकडम मे लगे रहते है। ये लोग बडी चालाकी से ग्रामीण उत्पादन कृषि उत्पादन वन उत्पादन तथा श्रम उत्पादनो से भारी मात्रा मे अप्रत्यक्ष कर वसूल कर तथा उन्हे थोडी सी प्रत्यक्ष सुविधा देकर उन्हे धोखा देते रहते हैं। बुद्धिजीवियों पूंजीपतियों को सस्ता श्रम चाहिये और राजनेताओं को आसान वोट। सस्ती कृत्रिम उर्जा दोनो को संतुष्ट रखती है। मै आज तक नहीं समझ सका कि गरीब ग्रामीण श्रमजीवी छोटे किसानो से बडा अप्रत्यक्ष कर वसूल कर उन्हे प्रत्यक्ष सब्सीडी देने जैसे षणयंत्र का पर्दाफाश न करने के पीछे क्या क्या उददेश्य छिपा है? आर्थिक असमानता वृद्धि स्पष्ट रूप से आर्थिक

समस्या है। कृत्रिम उर्जा को सस्ता करने से यह असमानता और बढती है। यदि हमारे पास इस आर्थिक समस्या का आर्थिक समाधान है तब गरीबी रेखा और अमीरी रेखा की जरूरत क्या है? यदि अन्य समाधान नही होता तब सोचा भी जा सकता था। किन्तु आर्थिक समाधान है और आर्थिक समाधान की जगह गरीबी और अमीरी रेखा की चर्चा करने के पीछे भी राजनेताओ का छिपा स्वार्थ है कि वे इसी बहाने और अधिक अधिकार अपने पास समेटना चाहते हैं।

कुछ लोग इस साम्यवादी विचार का प्रचार करते हैं कि दुनियां की संपूर्ण सम्पत्ति मे दुनियां के सब लोगो का समान अधिकार हैं। यह बात भारत मे भी जोर शोर से प्रचारित हो रही है। यदि यह सही होता तो भविष्य मे कोई अधिक काम क्यो करेगा क्योकि अधिक या कम काम करने से उसका परिणाम सबके बीच समान बंटेगा तो उत्पादन पर बहुंत विपरीत प्रभाव पडेगा। यह कैसे संभव है कि अलग अलग श्रम और बुद्धि रखने वालो का परिणाम सबके बीच समान रूप से बंटे। रूस और चीन इस प्रयोग की असफलता जान चुके है। भारत मे भी आम तौर पर इस साम्यवादी विचार के समर्थन मे इक्के दुक्के लोग ही आ रहे है तथा उनकी संख्या भी घटती जा रही है। श्रम, बुद्धि और धन की उत्पादन क्षमता कभी समान नहीं हो सकती। रूस चीन आदि अनेक साम्यवादी देशो ने भरपूर प्रयास किया। यहां तक कि तानाशाही तक लादी। बडी संख्या मे बुद्धिजीवियों की हत्या कर दी गई। किन्तु इन देशो मे इस प्रयत्न के विपरीत परिणाम हुए। प्रत्येक व्यक्ति की उत्पादक शक्ति प्रति स्पर्धा से बढ जाया करती है। यदि विकास की प्रतिस्पर्धा न हो तो अल्प काल के लिये भय के सहारे आप काम करा सकते है किन्तु भय का अभाव उत्पादन क्षमता पर बहुत विपरीत प्रभाव डालता है। प्रतिस्पर्धा व्यक्ति को कार्य की क्षमता के साथ साथ परिणाम भी निश्चित करती जाती है। यह प्रतिस्पर्धा ही उसे और अधिक गति से काम करने की प्रेरणा देती है। गरीबी या अमीरी रेखा ऐसी प्रेरणा को नुकसान पहुंचाती है और ऐसे नुकसान के परिणाम भी घातक होते है।

दूसरी बात यह है कि प्रत्येक व्यक्ति की श्रम और बुद्धि की क्षमता भिन्न भिन्न होती है । इस क्षमता का निर्धारण उसकी जन्म पूर्व की स्थिति, पारिवारिक वातावरण तथा सामाजिक परिवेश को मिलाकर बनती है। पूरी दुनियां मे किन्ही दो लोगो की कुल छमता कभी एक समान नही होती। आप पांच लोगो को आज आर्थिक रूप से समान कर दीजिये और कल ही जांच करिये तो सबमे आपस मे कुछ न कुछ फर्क हो जायगा । कोई भी तरीका आज तक नही बन सका जो किन्ही दो को भी बहुत दिनो तक समान रख सकें। यह अंतर स्वाभाविक भी है और सर्वकालिक भी।

सम्पत्ति के विषय मे सम्पूर्ण विश्व मे तीन प्रकार के विचार हैं 1 पश्चिम का जहां सम्पत्ति व्यक्ति की व्यक्तिगत होती है। यहां तक कि व्यक्ति परिवार का सदस्य रहते हुए भी पृथक सम्पत्ति रख सकता है। 2 साम्यवाद का जहां सम्पूर्ण सम्पत्ति समाज की होती है अर्थात सरकार की होती है। 3 गांधी का ट्रस्टी शिप का सिद्धान्त जो अब तक स्पष्ट रूप से समझ मे नही आया। चौथा सिद्धान्त मैने दिया है जिसमे न सम्पत्ति व्यक्तिगत होगी न सरकार की बल्कि परिवार की होगी जिसमे परिवार से अलग होते समय व्यक्ति बराबर हिस्सा ले सकता है। इस तरह व्यक्तिगत सम्पत्ति से अलग यह सिद्धान्त सोचा गया है। यह विचार सम्पत्ति के व्यक्तिगत अधिकार को समाप्त कर देगा।

भारत मे सम्पत्ति की अधिकतम सीमा की बात उठाना अव्यावहारिक भी है ।भारत को सम्पूर्ण विश्व से पूंजीगत प्रतिस्पर्धा करनी है। आप ऐसी सीमा बनाकर विश्व प्रतिस्पर्धा से अपने पूंजीपतियों को बाहर कर देंगे । साथ ही यह बात भी है कि विदेशी कम्पनियां तो भारत मे और भी कई गुना ज्यादा सम्पत्ति लेकर आ रही है। उनके प्रति इस सम्पत्ति सीमा का क्या संबंध होगा?

सबसे खतरनाक बात यह है कि सम्पत्ति की सीमा भारत के तंत्र को और ज्यादा शक्तिशाली बना देगी। जिस तंत्र के अधिकार क्षेत्र मे सेना है, पुलिस है, न्याय है, उसी तंत्र को सम्पत्ति के भी असीम अधिकार देना घातक होगा।

फिर भी मै चाहता हूॅ कि सांप भी मरे और लाठी भी न टूटे। न सरकार की प्रशासनिक शक्ति बढे न बेलगाम सम्पत्ति बढे। मै किसी प्रकार की अमीरी रेखा को अब्यावहारिक तथा घातक मानता हूॅ । मेरा तो मानना यह है कि किसी प्रकार की गरीबी रेखा से भी बचा जाय। कृत्रिम उर्जा की बहुत भारी मूल्य वृद्धि करके निचली आधी आबादी को दो हजार रूपया प्रतिमाह प्रति व्यक्ति की तब तक सहायता दे दी जाय जबतक आर्थिक असमानता नियंत्रित न हो जाये, तो एक ही प्रयास से सभी आर्थिक समस्याओ का समाधान हो सकता। साथ ही अनेक कर समाप्त करके सम्पूर्ण सम्पत्ति पर सिर्फ उस दर से कर लगा दिया जाय जितना सरकार को न्याय सुरक्षा जैसे दायित्व पूरा करने के लिये आवश्यक हो।

एक मई श्रम सम्मान का प्रतीक या श्रम शोषण का?

फिर एक मई आ गया। प्रतिवर्ष आता है और चला जाता है। नारे लगतें हैं जुलुस निकलते है और कुछ तथाकथित श्रमजीवियों को सम्मानित भी कर दिया जाता है। साथ ही आयोजकों को मिल जाता है अपनी श्रम शोषक नीतियों को एक वर्ष तक जारी रखने का अधिकार । जिस देश में कई दशकों से एक मई श्रम दिवस के रूप मे मनाया जाता हो और उस देश का श्रम जीवी आज भी नरेगा के अंतर्गत एक सौ साठ रूपया प्रतिदिन पर काम करने के लिये सड़को पर भीख का कटोरा लिये घूम रहा हो वहॉ श्रम दिवस की उपयोगिता पर खोजबीन तो होनी ही चाहिये।

प्राचीन समय में पूंजीवाद था । पूंजीवाद प्रायः श्रम शोषण के लिये लालायित रहता है । बुद्धिजीवी वर्ग पूंजीवाद से श्रम की सुरक्षा के प्रयत्न करता रहता है। न सभी पूंजीपति बुरे होते हैं न सभी बुद्धिजीवी अच्छे। बुरा और अच्छा होना व्यक्ति की व्यक्तिगत सोच पर निर्भर करता है। यह प्रश्न विशेष अर्थ नही रखता कि वह व्यक्ति पूंजीपति है, बुद्धिजीवी अथवा श्रमजीवी । किन्तु यह बात तब ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाती है जब ऐसे चालाक लोगो का सत्ता के साथ गठजोड हो जाता है । पूंजी ने श्रम को तो गुलाम बनाया ही, बुद्धिजीवियों को भी साथ ही वैसा ही कर लिया। बुद्धिजीवियो ने संगठित श्रमजीवी के रूप मे इस पूंजीवादी अत्याचार के विरूद्ध रिवोल्ट किया । उन्होने साम्यवाद समाजवाद के नाम पर श्रम जीवियों को साथ ले लिया। पूंजीवाद ने कई जगह घुटने टेक दिये। यह घुटने टेकने की घटना एक मई को हुई थी। इसलिये इस घटना की यादगार के रूप मे एक मई को मजदूर दिवस के रूप मे मनाया जाता है।

यह सच है कि एक मई को पूंजीवाद ने घुटने टेके। इस आधार पर यह दिवस श्रम सम्मान का दिन है। किन्तु उससे भी अधिक भयावह सच यह है कि एक मई को श्रम शोषण की पहली ईट रखी गई । अब तक पूंजीवाद प्रत्यक्ष रूप से श्रम शोषण करता भी था और दिखता भी था। किन्तु एक मई के बाद बुद्धिजीवियों ने ऐसा कमाल किया कि श्रम शोषण बढता गया और दिखना बन्द हो गया। समाज मे श्रम के नाम पर संगठित अर्धबुद्धिजीवी और असंगठित श्रमजीवी के रूप मे दो वर्ग बन गये। गांधी जी ने स्पष्ट कहा था कि श्रम सम्मान और श्रम मूल्य बढना चाहिये । मशीनों का उपयोग अनिवार्य स्थिति में किया जाय जब या तो श्रम अभाव हो जाय या श्रम संभव कार्य न हो । बुद्धिजीवियों ने गांधी की बात को किनारे करकें मार्क्स को बीच मे घुसा दिया कि मशीनों का अधिकाधिक उपयोग करके उसका लाभ श्रमजीवियों में बांट दिया जाय । सबसे बडा घपला यह हुआ कि बुद्धिजीवियो ने श्रम की स्वाभाविक परिभाषा ''शारीरिक श्रम'' को बदल कर उसके साथ बौद्धिक श्रम को जोड लिया। इस परिवर्तन से बुद्धिजीवियों का

रास्ता साफ हो गया। ये लोग श्रम जीवियों के नाम पर नीतियॉ बनाने लगे, संगठन बनाने लगे, सरकार बनाने लगे और उससे भी ज्यादा शक्तिशाली हो बैठे जहॉ पहले पूंजीपति हुआ करते थे । श्रम तो बेचारा पिछडता चला गया और मशीनी लाभ इन संगठित श्रमजीवियों के बीच बंटने लगा। इन लोगों ने सबसे पहले शिक्षा को महत्व दिलाना शुरू किया । ये श्रम को धक्का देकर शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान देने में पूरी तरह सफल हैं। आज भी श्रम का बजट काटकर शिक्षा का बजट बढाने की षणयंत्र कारी आवाजें उठती ही रहती हैं और बुद्धिजीवियों की सरकार ऐसी मांग तुरंत मान भी लेती है । शिक्षा पर बजट बढाना गलत नहीं है । श्रम को उचित मूल्य और सम्मान मिलने लगे और शेष बजट शिक्षा पर खर्च हो यह ठीक हैं। किन्तु शिक्षा पर बजट बढे चाहे उसके लिये रोटी, कपडा, मकान, दवा जैसी मूलभूत आवश्यकताओं पर ही टैक्स क्यों न लगाना पडे, यह गलत है। पैंसठ वर्षो के बाद भी एक सौ साठ रूपये मे श्रम को वर्ष भर काम देने के लिये हमारे पास पर्याप्त धन नहीं है, दूसरी ओर शिक्षा पर अनाप सनाप बजट खर्च होता है तो बुद्धिजीवियो की नीयत पर संदेह तो होता ही है। मैने तो सोचा भी नही था कि ग्रामीण उत्पादन और उपभोग की वस्तुओ पर इतना ज्यादा कर है । किन्तु है तो । मेरे बार बार प्रश्न करते रहने के बाद भी किसी बुद्धिजीवी मे हिम्मत नही हुई कि वे इस प्रश्न पर कुछ कहें।

श्रम शोषकों का मनोबल बढा । इन लोगों ने नई चालाकी करते हुए कृत्रिम उर्जा को अधिकाधिक सस्ता करते रहने की योजना बना ली । एक तीर से कई शिकार हो गये। श्रम मूल्य को बढने से रोकने में यह प्रयत्न बहुत कारगर रहा। क्योकि यदि कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि हो जाती तो वे सारी समस्याऍ स्वतः ही दूर हो जातीं जिनके आधार पर श्रमिकों के बीच असंतोष की ज्वाला जलाकर रखी जा सकती थी । इस माध्यम से आर्थिक असमानता बढती गई, गांव कमजोर और शहर मजबूत होने लगे। खेती को श्रम के साथ जोड दिया गया जबकि बुद्धि को उद्योग या सरकारी नौकरी के साथ। नौकरी और उद्योग को लाभकर और खेती को लगातार अलाभकार धंधा बनाने की कोशिश की गई । खेती के उत्पादन के मूल्यो को बढने से रोका गया। लगातार मंहगाई का झूठा हल्ला इस प्रकार जीवित रखा गया कि खेती से जुडे उत्पादनो का मूल्य बढ ही न सके । सरकारों ने भी उत्पादको की अपेक्षा उपभोक्ताओ का अधिक ख्याल रखा। खेती से जुडे उत्पादनों पर कई प्रकार के टैक्स और कानून लाद दिये गये। साइकिल पर चार सौ रूपया प्रति साइकिल टैक्स और रसोई गैस को सब्सीडी देना शुरू किया गया। दूसरी ओर टेलीफोन, कम्प्यूटर, आवागमन आदि उच्च तकनीक को अधिकाधिक उपयोगी और सस्ता बनाया गया जो बौद्धिक जगत के उपयोग में ज्यादा आती है। कम से कम आधा भारत ऐसा है जहां एक श्रमिक को दो सौ रूपये प्रतिदिन में भी काम नही मिलता । इसके बाद भी सम्पूर्ण भारत मे लगातार यह प्रचारित किया जा रहा है कि आज भारत में काम करने को मजदूर नहीं मिलते । आश्चर्य है कि आपको एक पद की आवश्यकता होने पर कई हजार आवेदन प्राप्त होते हैं दूसरी ओर खोजने पर भी मजदूर नहीं मिलते। क्योकि उस एक पद के लिये आवेदन के साथ है अच्छा वेतन, अच्छी घूस, सुविधा और सम्मान जनक कार्य और उपर से पद का रोब । श्रमिक कार्य में क्या जुडा है? दो ढाई सौ रूपया, मालिक –नौकर के संबंध, उपर से डांट डपट । विचार करिये कि आज मई दिवस ने शारीरिक श्रम का क्या हाल कर रखा है?

इन सब असमानताओ के बाद भी हालत यह है कि यदि मजदूर नही मिलते तो नरेगा में एक सौ साठ रूपया में मजदूर कहॉ से मिल रहे हैं कि आपको एक सौ दिन की सीमा घोषित करनी पडी । यदि आप एक सौ साठ रूपया मे भी खुला काम नहीं दे पा रहे तो भारत मे काम करने वालों का अभाव सिद्ध होता है कि काम देने वालों का अभाव । स्पष्ट है कि गांवो मे श्रमिक हैं और शहरों मे श्रमिकों की मांग है। पिछड़े क्षेत्रों में श्रमिक बेकार हैं तो विकसित क्षेत्रों में श्रम अभाव है।

नरेगा मे भी मशीनो का प्रयोग होने लगा है क्योकि डीजल, पेट्रोल, विजली का उपयोग सस्ता भी है और सुविधा जनक भी । मजदूर मशीन की अपेक्षा मंहगा है। पूरे भारत मे गरीब ग्रामीण श्रमजीवी के शोषण के उद्देश्य से शहरी पूंजीपति बुद्धिजीवी वर्ग तरह तरह के षड़यंत्र कर रहा है, और उस षड़यंत्र मे सबसे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है सस्ती कृत्रिम उर्जा। कृत्रिम उर्जा को इतने आकर्षक तरीके से गांव गांव तक पहुचाया जा रहा है कि बेचारा श्रमजीवी उसकी चकाचौध में यह समझ ही नहीं पाता कि यह तो उसकी सौत है, प्रतिस्पर्धी है, उसे बेरोजगार कर देगी।

मई दिवस बौद्धिक श्रम करने वालों के लिये वरदान है। उन्हे पूंजीपतियों के समानान्तर एक पहचान मिली है। उन्हे शारीरिक श्रम करने वालों का शोषण करने का अधिकार मिला है। उन्हे राज्य सत्ता मे भागीदारी मिली है तथा उनकी प्रगति के द्वार खुले है, उन्हे संगठन बनाकर सरकारों और समाज को ब्लैक मेल करने की पूरी छूट मिली है। दूसरी ओर एक मई शारीरिक श्रम करने वालों के लिये एक कलंक का दिन है । यही वह दिन है जब श्रम के नाम पर संगठित बुद्धिजीवी समाज से और अधिक वेतन भत्ते सुविधाऍ बजट आदि की मांग करते हैं और पा भी जाते हैं । दूसरी ओर श्रम मूल्य को मुद्रा स्फीति के साथ भी जोडने मे कठिनाई हो रही है । भारत की कुल विकास दर छः प्रतिशत करीब है। यह पूंजीपतियों की बारह बुद्धिजीवियों की छः तथा श्रमजीवियों की एक प्रतिशत का औसत है। यह एक प्रतिशत की विकास दर भी सरकार द्वारा प्राप्त सस्ते अनाज, नरेगा द्वारा प्राप्त रोजगार तथा अन्य सुविधाओं के कारण है अन्यथा विकास दर नकारात्मक ही है। साम्यवाद ने सम्पूर्ण भारत मे श्रम को धोखा देकर उनकी स्वाभाविक विकास दर को रोकने की पहल की है। कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि के खिलाफ सबसे आगे साम्यवादी ही खडे होते हैं क्योंकि उन्हे डर है कि यदि कृत्रिम उर्जा की भारी मूल्य वृद्धि होगी तो श्रम की स्वाभाविक मांग बढ जायगी और इससे गरीब ग्रामिण श्रमजीवी के अंदर निरंतर जलायी जा रही असंतोष की ज्वाला बुझ सकती हैं जो ज्वाला साम्यवाद का एक मात्र आधार है। अब नये परिप्रेक्ष्य मे एक मई को श्रम शोषण दिवस के रूप मे मनाने की पहल करनी चाहिये क्योकि एक मई ने बुद्धिजीवी मजदूरों को सशक्त किया है, उन्हे आजादी दिलाई है किन्तु श्रम को उससे दूर रखने का षड़यंत्र भी किया है । अब तक श्रम ऐसे झूठे प्रचार से बहुत छला गया। अब नही छला जाना चाहिये । साम्यवाद का पतन निश्चित हो चुका है, कृत्रिम उर्जा की मूल्य वद्धि के भी प्रयास शुरू हो चुके हैं, श्रम के नाम पर संगठित बुद्धिजीवी ब्लैकमेलिंग चुपचाप दम तोड रही है। श्रम के नाम पर धोखा देकर श्रम शोषण करने वाले महत्वहीन हो रहे हैं। किन्तु इन सबके बाद भी शारीरिक श्रम मजबूत न होकर पूंजीवाद ही दुबारा आ रहा है जो अच्छे आसार नहीं है। यदि साम्यवाद का स्थान पूंजीवाद ने ले भी लिया तो भले ही भ्रष्टाचार घट जावे, आर्थिक विकास दर बढ जावे, दुनिया मे भारत एक नम्बर हो जावे किन्तु बेचारा श्रम तो इससे कोई लाभ नहीं उठा सकेगा क्योकि श्रम को लाभ होगा कृत्रिम उर्जा की भारी मूल्य वृद्धि से , कृषि को लाभकारी व्यवसाय के रूप मे स्थापित होने से, ग्राम सभाओं के वास्तविक सशक्तिकरण से। पूंजीवाद अब तक इन दिशाओं मे उदासीन है । शारीरिक श्रम को बौद्धिक श्रम के षणयंत्र से मुक्त होना ही पर्याप्त नहीं है, पर्याप्त होगा श्रम की मांग का बढना, उसका महत्व बढना और यह तब तक संभव नही जब तक डीजल, पेट्रोल, बिजली, केरोसीन, कोयला, गैस के मूल्यों मे भारी वृद्धि करके सम्पूर्ण धन गरीब ग्रामीण श्रमजीवी के बीच बांट न दिया जाय। हमे भारत के प्रधान मंत्री नरेन्द्र मोदी जी से बहुत आशाऍ हैं। जिस तरह उन्होने विकसित देश बनने की दिशा देने की पहल की है उसी तरह वे श्रम के साथ भी न्याय करने की पहल करें।नरेन्द्र मोदी ने अपने कार्यकाल के दस महिनो में उंट के मुहॅ में जीरा के समान एक दो प्रतिशत कृत्रिम

उर्जा पर टैक्स बढ़ाने की पहल की है। आप देखेंगे कि सारे बुद्धिजीवियों के दलाल इस योजना के खिलाफ लठ लेकर पड़े हैं। कांग्रेस का तो विरोध करना सवाभाविक ही है किन्तु लालुप्रसाद ने जितना नीचे उतर कर कृत्रिम उर्जा,मुल्यवृद्धि,के खिलाफ आवाज उठायी वह आश्चर्यजनक है। यद्यपि नरेन्द्र मोदी मजबूत प्रधानमंत्री के रुप में दिख रहें है, किन्तू उनकी भी हिम्मत नहीं पड़ रही है कि वे यह बात कह दें कि कृत्रिम उर्जा की मुल्यवृद्धि श्रम मुल्य और श्रम की मॉग बढ़ने के हित में होने के कारण बहुत तेजी से की जानी चाहिये थी किन्तु अब तक वैसा नहीं हो सका और अब मैने श्रमेव जयते का नारा दिया है तो मैं उसे पूरा करके दिखाउॅगा। मुझे लगता है कि यदि नरेन्द्र मोदी ने ऐसा कहॉ तो उनकी पार्टी के भी पूॅजीपति ,बुद्धिजीवी उनके खिलाफ खड़े हो सकते हैं। किन्तु न्याय की मॉग है कि नरेन्द्र मोदी या तो श्रमेव जयते का नारा छोड़ दें अथवा पूॅजीपतियों की नाराजगी मोल लेने का खतरा उठावें।

हमें अन्तिम रूप से यह स्वीकार करना चाहिये कि श्रम, बुद्धि और धन के बीच समानता न तो संभव है न उचित । साथ ही हमे यह भी मानना होगा कि इनके बीच बढती अनियंत्रित असीमित असमानता समाज मे कभी शान्ति पैदा नहीं होने देगी। मार्क्सवाद ने समानता का असंभव लालीपाप दिखाकर इतने वर्षो तक श्रम को छला। अब पूंजीवाद श्रम को दबाना शुरू करेगा। हम जितनी जल्दी वास्तविकता को समझकर श्रम वुद्धि और धन के बीच असमानता की एक संभव रेखा खींच ले और उस रेखा के आधार पर असमानता दूर करने का प्रयास करें तो संभव है कि समाज मे वास्तविक शान्ति दिखनी शुरू हो।

एन जी ओ संस्कृति और भारत

बहुत प्राचीन काल से ही यह प्रवृत्ति रही है कि एक देश के शासक दूसरे देश को कमजोर करने के विभिन्न मार्ग अपनाते रहते है। आम तौर पर इस उददेश्य के लिये कूटनीति का सहारा लिया जाता है। राजशाही के समय अलग तरह की कूटनीति का प्रयोग होता था किन्तु लोकतंत्र मे सत्ता किसी व्यक्ति या समूह तक सीमित न होकर आम जन समूह आधारित होती है। इसलिये विदेशी कूटनीति भी राजनैतिक दलो के साथ साथ जनता तक को कुटनीतिक प्रभावो मे लाने की कोशिश करती है। यह कूटनीतिक कोशिश शत्रु राष्ट्र तक तो तो होती ही है किन्तु मित्र राष्ट्रों तक भी इस नीति का उपयोग किया जाता है। दूसरे देशों के संवेदनशील सत्ताधीशों की जासूसी तो एक आम बात है ही किन्तु कमजोर राष्ट्रों को प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता देकर तथा अप्रत्यक्ष वैचारिक द्वंद पैदा करने की भी कोशिशे आमतौर पर दिखती है। भारत में भी दो सशक्त ध्रुव अपने अपने वैचारिक तथा राजनैतिक हितों के लिये प्रत्यक्ष तथा परोक्ष कुटनीति का प्रयोग करते है। चीन और रूस अपने कुछ समर्थको को पर्याप्त आर्थिक सहायता देकर साम्यवाद को पल्लवित पुष्पित रखता रहा है। यहां तक कि भारत चीन युद्ध काल मे ये साम्यवादी दो गुटो मे बटकर अलग अलग भूमिका दिखा चुके हैं। दूसरा ध्रुव पूंजीवादी देशों का है । उनका तरीका साम्यवाद से बिल्कुल भिन्न प्रकार का है। एक तरफ तो उनकी सरकारें भारत सरकार को ब्यापक आर्थिक सहायता करके उन्हे सम्मोहित किये रहती हैं तो दूसरी ओर ये सरकारें भारतीय सांसदों को गुप्त धन द्वारा भी प्रभावित करने का खेल खेलती रहती हैं। किन्तु इन सरकारों से हटकर उन देशो के उद्योगपति भी भारत मे इस खेल मे अपना हाथ बंटाते हैं। ये उद्योगपति भारत के कुछ लोगो को बडी मात्रा मे आर्थिक सहायता करके बदले में उनसे ऐसे अनावश्यक आंदोलन मे लगाये रहते हैं जो समाज मे वर्ग विद्वेष फैलाकर वर्ग संघर्ष की दिशा मे निरंतर सक्रिय रहे।

भारत मे बहुत ब्यापक स्तर तक नीचे से नीचे तक भ्रष्टाचार है। इन विदेशियों ने भारत की कुछ गांधीवादी संस्थाओं को आर्थिक सहायता देकर कुछ अच्छे काम करवाये। इन संस्थाओ को ही एन जी ओ कहा गया। भारत के आम लोगो को महसूस हुआ कि ये एन जी ओ सेवा भावी संस्थाएं है , कोई संगठन नहीं। पश्चिम समर्थक नेताओं ने भी सरकारों को संदेश दिया कि सरकारी मशीनरी की अपेक्षा गैर सरकारी संस्थाएं या तो पूरी तरह इमानदार है या कम भ्रष्ट तो हैं ही । इस तरह भारत की सरकारों को अपने भ्रष्टाचार को दूर करने की अपेक्षा एन जी ओ को प्रोत्साहित करना ज्यादा अच्छा लगा।

भारत मे यह आम प्रथा है कि जो पहचान, चिन्ह या पोशाक सामान्य समाज मे सम्मानित हो जाता है उस पहचान, चिन्ह या पोशाक की नकल करने की होड मच जाती है। प्राचीन काल में रावण ने या कालनेमि ने ऐसी ही नकल की थी । अनेक स्वार्थी तत्व आज भी साधु सन्यासी का वेश धारण करके राजनीति कर रहे हैं अथवा गृहस्थ कार्य में संलग्न हैं। अनेक लोगो को मैं आज भी जानता हूॅ जिनमें गॉधी के विचारों के विपरीत सारे अवगुण होते हुए भी अपने नाम के साथ खुलकर गॉधी नाम का उपयोग करते हैं। यही दुर्गति समाज शब्द की भी हुई। अधिकांश एन जी ओ सामाजिक संस्था का नाम रखकर तथा प्रचारित करके अन्दर अन्दर अपना भी व्यवसाय करने लगे और साथ में धनदाता संगठन की वकालत भी करने लगे। इन संस्थाओं में इस सीमा तक भ्रष्टाचार फैला कि सरकारी संस्थाऍ भी उनके पीछे छूट गईं। इन भ्रष्ट एन जी ओ को विदेशी धन भी प्राप्त था, विदेशी संरक्षण भी प्राप्त था तथा भारतीय सरकार और समाज का सम्मान भी प्राप्त था। धीरे–धीरे अधिकांश राजनेताओं तथा बड़े अफसरों ने अपने–अपने परिवारो के नाम पर ऐसे एन जी ओ का बोर्ड लगाकर भ्रष्टाचार का नया रास्ता ढूॅढ लिया। मुझे याद है कि मेरे एक मित्र ने भी यह मार्ग अपनाया। एक दूसरे संगठन ने दस करोड़ रुपया देने का वादा करके प्रारंभ में पॉच करोड़ रुपया स्वयं ले लेने का सौदा किया। विचारणीय प्रश्न यह है कि धन लेने वाली संस्था को पॉच करोड़ रुपये लेकर दस करोड़ का हिसाब भी देना था और अपना खर्च भी निकालना था। हमारा मित्र सहर्ष तैयार हो गया। मैं जानता हूॅ कि आमतौर पर अधिकांश एन जी ओ ऐसी दूकानदारी में व्यस्त है फिर भी मेरे मित्र ने बाद में इस समझौते से इन्कार कर दिया और वह रुपया नहीं लिया।

10–20 वर्ष पहले एन जी ओ संस्था के रुप में काम करते थे जिसका अर्थ होता है समाज सेवा । किन्तु जब अथाह धन आने लगा, चरित्र का महत्व नहीं रहा, धुर्त लोगों का बहुमत हो गया, तब ये एन जी ओ संस्था से बदलकर संगठन के रुप में स्थापित हो गये। इन एन जी ओ ने संगठन के रुप में सरकारों पर दबाव बनाना और पश्चिम के देशों से बनवाना भी शुरु कर दिया। इन्होने सेवा भाव छोड़कर अपने धनदाताओं की इच्छानुसार वर्ग–विद्वेष,वर्ग–संघर्ष को हवा देने का काम शुरु कर दिया। इन तथाकथित सेवाभाव की आड़ में वर्ग विद्वेष फैलाने वाले संगठनो को इन्हें नियंत्रित करने वाले देशों ने बड़े–बड़े अन्तरराष्ट्रीय सम्मान से भी विभूषित करना शुरु कर दिया। ऐसे ही सम्मान किसी को जलपुरुष,किसी को बचपन बचाओं पुरुष तो किसी अन्य को महिला सुरक्षा दाता के रुप में प्राप्त होने लगे। स्पष्ट है कि ऐसे पुरस्कार पाने में आमतौर पर तिकड़म का ही सहारा अधिक लिया जाता है। ऐसे एन जी ओ संगठन कभी सत्तारुढ़ दल के साथ जुड़ जाते हैं तो कभी विपक्ष के साथ। दिल्ली के चुनाव में फोर्ड फाउंडेशन की प्रत्यक्ष सक्रियता जग जाहिर हो चुकी है। प्रश्न उठता है कि ये विदेशी सेवा भावी फाउंडेशन भारत की सेवाभावी संस्थाओं को धन न देकर वर्ग–विद्वेश में सक्रिय संगठनों को ही बड़ी मात्रा में धन क्यों देते है। ऐसा लगता है कि इन विदेशी संस्थाओं का स्पष्ट उद्देश्य भारत की परिवार व्यवस्था तथा समाज व्यवस्था को तोड़कर उसे कमजोर करना मात्र है। भारत गॉधी का देश रहा है। भारत में वर्ग समन्वय सर्वाधिक महत्वपूर्ण मार्ग रहा है। विदेशी

संगठनों ने प्रारंभ में नेहरु और अम्बेडकर को अपने साथ जोडकर गॉधी के वर्ग समन्वय को गम्भीर नुकसान पहुॅचाया और इन दोनो के जाने के बाद तो भारत में वर्ग निमार्ण,वर्ग–विद्वेश तथा वर्ग संघर्ष को प्रोत्साहन देने वालों की बाढ़ सी आ गई। स्पष्ट दिखता है कि अनेक पेशेवर संगठन एन जी ओ के नाम से आदिवासी गैर आदिवासी ,हरिजन,सवर्ण,महिला,पुरुष, मजदूर उद्योगपति जैसे वर्ग प्रोत्साहन में दिन–रात लगे रहते है तथा इन सबको प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष विदेशों और सरकारी धन प्राप्त होता रहता है।

आजकल तो एक नयी बीमारी पैदा हो गई है कि पर्यावरण का क ख ग घ न जानने वाले एन जी ओ विदेशी इशारे पर अपने को पर्यावरण वादी कहने लग गये है। इन सबको विदेशों के पर्यावरण विरोधी प्रयासों की कोई चिंता नही। ये तो समझते है कि प्र्यावरण के लिए न भारत सरकार कुछ सोचती है न भारतीय समाज और न ही भारतीय ग्रामीण। ये फर्राटे से अंग्रेजी बोलने वाले, सूटबूट वाले विदेशी एजेंट अपने को पर्यावरण का सर्वोच्च ठेकेदार सिद्ध करते रहते है। मैं अच्छी तरह जानता हूॅ कि इनका सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण कार्य होता है भारत को बिजली उत्पादन में आत्मनिर्भर नहीं होने देना। खाड़ी देशों से आया हुआ डीजल पेट्रोल इनकी नजर में उतना पर्यावरण प्रदूषण नहीं करता जितना भारत में बनने वाली बिजली का विकास। ऐसा लगता है जैसे इन लोगो ने खाडी देशों की वकालत करने का ठेका लिया हुआ है। चाहे आज जल, बिजली कारखाना लगावें अथवा एटोमिक बिजली अथवा किसी अन्य तरह की बिजली ये पर्यावरणवादी ऐसी बिजली के उत्पादन को रोकने के लिए अपनी जान देने को तैयार रहते है।भारत की नयी सरकार ने फोर्ड फॉउडेशन सहित कुछ संस्थाओं की इस नकारात्मक सोच पर अंकुश लगाने का प्रयास किया है। यह सही है कि ऐसे एन जी ओ का प्रभाव क्षेत्र भी पूरे भारत में बहुत बढ़ा है। अटल बिहारी बाजपेयी की सरकार बहुत अच्छा काम कर रही थी किन्तु सोनिया गॉधी के प्रभाव से इन एन जी ओ ने कॉग्रेस की मदद करके कांग्रेस को चुनाव में मजबूत किया। बदले में सोनिया जी ने मनमोहन सिंह के उपर एक और एन जी ओ संगठनो की अलग सरकार बनाकर तलवार लटका दी। बेचारे मनमोहन सिंह का क्या परिणाम हुआ यह सब जानते है।सोनिया जी का उद्देश्य पूरा हो गया कि अब उनका बेटा उनकी जगह नेता बनने में सफल हुआ है। लेकिन नयी सरकार ने इन पर्यावरणवादी गैर सरकारी संगठन वादी विदेशी एजेंटो की चुनौती स्वीकार करने का मन बनाया है। इसके विपरीत इन संगठनों ने भी एक साथ मिलकर एक बड़ा राष्ट्रीय एन जी ओ का संगठन बनाकर लड़ाई लड़ने की शुरुवात की है। विदेशी राष्ट्रों ने भी भारत सरकार की इस कोशिश की आलोचना की है। भविष्य क्या होगा यह तो नहीं कहा जा सकता किन्तु जिस तरह पंजाब केसरी जैसे राष्ट्रीय अखबार ने विषय पर सम्पादकीय लिखकर इन संगठनों की पोल खोली है, उससे ऐसा आभास होता है कि इस लड़ाई में भारत सरकार का मनोबल कमजोर नहीं है। मैं स्पष्ट कर दूॅ कि वर्ग–समन्वय को किसी भी रुप में नुकसान पहुॅचाने वालों तथा परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था को तोडने वाले किसी भी प्रयास के मैं पूरी तरह विरुद्ध हूॅ। चाहे वह प्रयास भारत सरकार करे या कोई विदेशी सरकार या संस्था। इसी विचारधारा के अन्तर्गत मेने इस लेख के माध्यम से समाज के समक्ष अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

मैं स्वयं अनेक गॉधीवादी संस्थाओं तथा आर्यसमाज से जुड़ी विचारधारा के साथ समन्वय करके इस वर्ग समन्वय के कार्य में कई वर्षो से लगा हूॅ। अनेक सेवा भावी भारतीय इस कार्य में आर्थिक दान देकर मेरा सहयोग करते हैं। मुझे आश्चर्य होता है कि मेरे अनेक निकटस्थ मित्रों तक को ऐसा भ्रम होता है कि मुझे या तो कहीं से विदेशी धन प्राप्त होगा अथवा कोई सरकारी सहायता। मैं कभी कभी ऐसे प्रश्न के उत्तर में जब बताता हूॅ कि मैं तो कोई पंजीकृत संस्था भी नहीं हूॅ और संगठन भी नही। विदेशी या सरकारी धन लेने के लिए सब पंजीकरण की तिकड़म करना आवश्यक है, जो मैने न कभी की न करने की आवश्यकता है और यदि मैं चाहता भी तो कोई वर्ग समन्वय के लिए मुझे सहायता देने को तैयार नहीं होता क्योंकि वर्ग विद्वेश,वर्ग संघर्ष से उसे राजनैतिक लाभ मिल सकता था। आज मुझे गर्व है कि भारत सरकार द्वारा इन तिकड़मों के खिलाफ पहल करने से मुझे मेरा अपना स्वाभिमान जगा है।

भीमराव अम्बेड़कर की सामाजिक सोच की समीक्षा

14 अप्रैल अम्बेडकर दिवस के रुप में मनाया जाता है।14 अप्रैल को डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के गुण–दोषों की समीक्षा का अवसर होता है। डॉ0 अम्बेडकर के माता पिता के अनुसार वे अवर्ण माने जाते है, किन्तु यदि उनकी योग्यता का आंकलन किया जाये,तो वे औसत सवर्ण की अपेक्षा कई गुना अधिक क्षमता और योग्यता रखते थे। भीमराव अम्बेड़कर बचपन से ही विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। इस प्रतिभा का आंकलन करके ही तत्कालीन क्षत्रिय महाराज ने लीक से हटकर उन्हें शिक्षा के सारे अवसर उपलब्ध कराये। डॉ0 अम्बेडकर को अवर्ण होते हुए भी ब्राह्मणों से एक खास लगाव था। उन्होने अपना नाम अपने ब्राह्मण शिक्षक अमवेदकर के नाम पर अम्बेडकर रखा,तथा विवाह भी ब्राह्मणी से ही किया। भीमराव अम्बेड़कर को सत्ता की राजनीति से विशेष लगाव था। यही कारण है कि वे मरते दम तक उच्चत्तम सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करते रहे।

भीमराव अम्बेड़कर में एक सफल कूटनीतिज्ञ के सारे गुण मौजूद थे। जिस समय देश अंग्रेजों से मुक्ति की लड़ाई लड़ रहा था, तो ड़ॉ0 अम्बेड़कर समाज को तोड़कर सफल सत्ता की कोशिश में लगे थे। डॉ0 अम्बेड़कर बड़े दूरदर्शी थे।वे सत्ता प्राप्त करने में सफल भी हो जाते । किन्तु गॉधी ने उनकी सारी चालाकी को फेल कर दिया। अम्बेड़कर समझते थे कि मुसलमान देश का बॅटवारा कराने में सफल हो सकते है। यही सोचकर उन्होने मुसलमान बनने का प्रयास किया, किन्तु गॉधी ने उन्हें रोक दिया और गॉधी का विरोध करने की उनकी हिम्मत नहीं हुई। फिर भी उन्होने हार नहीं मानी और आदिवासी अवर्ण महिला का समूह बनाकर नेतृत्व का संघर्ष प्रारंभ किया,उनकी सोच थी कि जब पाकिस्तान बंट सकता है तो दलित स्थान भी क्यों नहीं बटेगा? इस सोच पर भी गॉधी ने अम्बेड़कर को पीछे हटने पर मजबूर कर दिया। स्वतंत्रता के बाद भी अम्बेड़कर चुप नहीं बैठे और उन्होने हिन्दू कोड बिल के नाम पर मुसलमानों अवर्णों और महिलाओं का त्रिगुट बनाकर सवर्णों को चुनौती दी,किन्तु यहॉ भी सवर्ण मजबूत पड़े और अम्बेड़कर अपनी सीट से भी चुनाव हार गये। फिर भी उन्होने हार नहीं मानी और बौद्ध धर्म स्वीकार करके आगे बढ़ना चाहा किन्तु इस बार ईश्वर ने ही उन्हें धोखा दें दिया,और उनकी कहानी यहीं से समाप्त हो गई।

अम्बेड़कर शुरु से ही राजनैतिक कूटनीति में माहिर माने जाते है। राजनीति का सफल सिद्धांत माना जाता है कि राजनेता समाज को कभी एक जुट न होने दें। अम्बेड़कर ने इस राजनैतिक गुण का भरपूर उपयोग किया। भारत में समाज को तोड़ने वालो में सबसे पहला नाम डॉ0भीमराव अम्बेड़कर का आता है। अन्य सभी नेता तो स्वतंत्रता के बाद इस कार्य में लगे और यह भी संभव है कि उनमें से अनेक अम्बेड़कर के पीछे–पीछे इस कार्य में लगे हो,किन्तु स्वतंत्रता के पूर्व डॉ0अम्बेड़कर ही अकेले राजनेता थे जो पूरी ईमानदारी से समाज को तोडने में प्रारंभ से ही लगे थे। अम्बेड़कर ने अपने पूरे कार्यकाल में महिला और पुरुष के बीच भेद डालने की कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। सन 1942 के पूर्व भी वे महिला सशक्तिकरण का नारा लगाते रहे और स्वतंत्रता के बाद तो कानून मंत्री बनकर उन्हे समाज को महिला पुरूष मे तोडने की आजादी ही मिल गई। डां अम्बेडकर ने श्रम और बुद्धि के बीच भी एक मजबूत दीवार खडी कर दी। डां अम्बेडकर ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होने बडी चालाकी से बुद्धिजिवियों द्वारा श्रम शोषण के वैधानिक अवसर पैदा कर दिये। डा अम्बेडकर ने बौद्धिक श्रम को भी शारीरिक श्रम का एक हिस्सा बना दिया । परिणाम हुआ कि शारीरिक श्रम पिछड गया और बौद्धिक श्रम लगातार आगे बढता गया। दुनिया जानती है कि डा अम्बेडकर ने बुद्धिजीवी अवर्णो और बुद्धिजीवी सवर्णो के बीच एक समझौता कराकर श्रम जीवी अवर्णो के साथ धोखा किया । स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के पूर्व बुद्धिजीवी सवर्ण अधिकांश लाभ के अवसरो पर काविज थे । अम्बेडकर ने उन लाभ के अवसरो पर बुद्धिजीवी अवर्णो का भी हिस्सा कायम करा दिया । स्पष्ट है कि इससे उन्हे दुहरा लाभ हुआ। कुल मिलाकर भारत मे दो

तीन प्रतिशत ही बुद्धिजीवी अवर्णो की संख्या है। शेष 95.97 प्रतिशत अवर्ण तो श्रमजीवी ही हैं। बेचारे श्रमजीवी अवर्ण आज भी फटेहाल हैं। किन्तु दो तीन प्रतिशत अवर्ण बुद्धिजीवी आज अम्बेडकर की संगठित जय जयकार करते है। भारत मे श्रमजीवी कभी संगठित नही है। चाहे वे अवर्ण हो या सवर्ण । ऐसे असंगठित श्रमजीवियों की देश में कोई आवाज भी नहीं है। दूसरी ओर दो तीन प्रतिशत अवर्ण बुद्धिजीवी भी डा अम्बेडकर को भगवान मानकर पूजा करते है। सच भी है कि यदि अम्बेडकर नही होते तो इनका भी वही हश्र होता जो आज अन्य अवर्ण श्रमजीवियों का हो रहा है। अपने ही भाइयों को कीमत पर ये तरक्की करने वाले अवर्ण यह नही सोचते कि उनहोने अन्य अवर्णो के साथ धोखा किया है । मुझे तो आश्चर्य होता है कि भीमराव अम्बेडकर ने स्वतंत्रता के बाद स्वतंत्र भारत मे भी हिन्दू कोड बिल सरीखा जहरीला पक्षपात पूर्ण कानून बनवाने मे सफलता प्राप्त कर ली। हिन्दू कोड बिल भारत के लिये एक कलंक था और रहेगा। हिन्दू कोड बिल ने हिन्दू और मुसलमान के बीच एक स्थाई दीवार खडी कर दी है। हिन्दू कोड बिल ने महिला और पूरूष के बीच भी एक मजबूत दीवार खडी कर दी है, जो स्वतंत्रता को 67 वर्ष बीतने के बाद भी चौडी से चौडी होती जा रही हैं। यह सच है कि पुरूष प्रधान परिवार व्यवस्था को बदलने की आवश्यकता थी। उसी तरह सवर्ण और अवर्ण की जातीय व्यवस्था को भी बदलने की आवश्यकता थी। गांधी इन सब समस्याओं के समाधान की बात सोचते थे तो अम्बेडकर इन सब सामाजिक बुराइयों से लाभ उठाना चाहते थे।गॉधी वर्ग समन्वय के पक्षधर थे तथा वर्ग विद्वेष तथा वर्ग संघर्ष को समाज के लिए घातक मानते थे जबकि अम्बेडकर वर्ग विद्वेष वर्ग संघर्ष को अपने राजनैतिक हित के लिए अच्छा मानते थे। गांधी डा अम्बेडकर को अच्छी तरह पहचानते थे, और डा अम्बेडकर भी गांधी को अच्छी तरह समझते थे। गांधी अम्बेडकर की नजर मे कांटे के समान चुभंते थे। किन्तु गांधी की लोकप्रियता के सामने अम्बेडकर को चुप रहना पड जाता था। गांधी के बाद जो भी नेता आये वे अधिकांश स्वार्थी थे इसलिये उनमे अम्बेडकर से आंख मिलाने की क्षमता नहीं थी। यही कारण था कि गांधी के बाद अम्बेडकर पूरी तरह मनमाना करने लगे। मेरे विचार मे गांधी और अम्बेडकर के लिये यदि कोई शब्द उपयुक्त हो सकता है तो वह नायक और खलनायक ही हो सकता है।

वर्तमान स्थिति की समीक्षा करें तो भारत के सभी अवर्ण बुद्धिजीवी तो डा अम्बेडकर के प्रति कृतज्ञ हैं ही साथ ही सभी सवर्ण बुद्धिजीवी और सभी राजनेता भी उनके प्रति कृतज्ञता ही प्रकट करते हैं क्योंकि डा अम्बेडकर ने सवर्ण अवर्ण बुद्धिजीवियों के बीच एक दूरगामी समझौता कराकर श्रम और बुद्धि के बीच टकराव टाल दिया दूसरी ओर डा अम्बेडकर ने खतरा उठाकर भी राजनेताओ के लिये समाज को टुकडो मे बांटने का एक दूरगामी रास्ता बना दिया जिसका लाभ उठाकर वे अब तक राजनीति मे सफलता प्राप्त कर रहे हैं। इसके बाद भी यदि कोई अम्बेडकर की जय न बोले तो वह मूर्ख ही तो माना जायगा।

प्रश्नोत्तर

1 श्री रोशन लाल अग्रवाल रायपुर छत्तीसगढ़

विचार–आपने डा0 भीमराव अम्बेड़कर के कार्यों की समीक्षा न करके उनकी नीयत पर संदेश व्यक्त किया हैं। किन्तु मैं यह मानता हूॅ कि उस समय शूद्रों और दलितों की जो भयावह स्थिति थी उसमें अम्बेड़कर की जगह कोई अन्य भी सक्षम अवर्ण होता तो वह भी ऐसा ही सोचता। डा0 अम्बेड़कर किसी भी स्थिति में अछूतों के साथ हो रहे अन्याय को समाप्त देखना चाहते थे चाहे इस अन्याय को समाप्त कराने के लिये किसी भी सीमा तक क्यों न जाना पड़े। यहॉ तक कि यदि इसके लिये भारत की स्वतंत्रता में भी विलम्ब होता तो अम्बेड़कर इस सीमा तक भी तैयार थे। यदि किसी पीड़ित समुदाय के अधिकारों के लिये कोई व्यक्ति एक पक्षीय आगे बढ़े तो उसकी नीयत पर संदेह करना आप जैसे व्यक्ति के लिये ठीक नहीं। मेरा तो मत है कि डा0 अम्बेड़कर की नीयत गलत नहीं थी,लक्ष्य भी गलत नहीं था मार्ग गलत हो सकता है। मैंने डा0 अम्बेड़कर को यह भी कहते सुना है कि भारत में अवर्णों को सिर्फ राजनैतिक स्वतंत्रता ही मिली हैं,आर्थिक नहीं। स्पष्ट है कि वे शूद्रों के विषय में अधिक सोचते थे। किसी के चिन्तन में यदि कोई कमी हो तो उसे नीयत की कमी बताना ठीक नहीं।

2गजेंन्द्र सिंह की मौत का कुछ सच

राजस्थान के एक कथित किसान गजेंन्द्र सिंह ने हजारों किसान समर्थक नेताओं की उपस्थिति में पेड़ पर चढ़कर फॉसी लगा ली और कोई उसे बचा नहीं सका। आरोप प्रत्यारोप का दौर शुरु हुआ और कई लोग इस आत्महत्या का पोस्ट मार्टम करने दौड़ पड़े। मैं वहॉ प्रत्यक्ष दर्शी नहीं था किन्तु सारे घटनाक्रम से कुछ विचित्र बात सामने आई। गजेंन्द्र सिंह कोई पीड़ित किसान नहीं था न ही वह वहॉ आत्महत्या करने गया था और न ही वह अंतिम स्थिति तक आत्महत्या करना चाहता था।यह स्पष्ट है कि वह आप का एक कार्यकर्ता था। उसके पेड़ पर चढ़ने तथा फॉसी का फंदा लगाते तक सब लोग इसे सुनियोजित स्टंट समझ रहे थे। मंच पर उपस्थित आप नेता भी या तो पूर्व जानकारी के कारण या उसकी गतिविधि को स्टंट मानकर या तो इसे महत्वहीन मान रहे थे या घटना का लाभ उठाने में लगे थे। संभवतः यह स्टंट दुर्घटना में बदल कर उसकी मौत का कारण बना। यदि गजेंन्द्र सिंह के स्टंट में आप नेता पूर्व से शामिल थे तो यह घटना उनके लिये बेहद घातक होगी और यदि शामिल नहीं थे तो उन्हें इतना माफी मांगने, रोने धोने या बैंक फुट पर आने का कोई कारण भी नहीं है।आप नेताओं का गंभीर पश्चाताप अनेक शंकाओ को जन्म देता है।

मैं नहीं समझता कि इस घटना में किसी अन्य ने क्या गलत किया। मेरे सामने कोई व्यक्ति आकर ताव में कहे कि यदि आपने मेरी बात नहीं सुनी तो मैं कुऍ में कूद जाउॅगा। मैने भी उसे उसी तरह कह दिया कि जा कूद जा । वह आदमी सच में जाकर कूद कर मर गया। मैं नहीं समझता कि मैं इसमें किस सीमा तक गलत हूॅ। क्या मुझे इस धमकी के समक्ष झुककर उसकी बात मान लेनी चाहिये? जब तक मुझे ऐसा न लगे कि वह ऐसा करने के प्रति गंभीर है तब तक मुझे क्यों उसकी धमकी में आना चाहिये? और यदि मुझे गंभीर भी लगे तो मैं उसे बचाने के लिये बाध्य नहीं हूॅ। मानवता के नाते मुझे उसे बचाने की कोशिश करनी चाहिये थी किन्तु उसे बचाना न मेरा दायित्व था न किसी और का। यहॉ तक कि ऐसी आत्महत्याओं को रोकना पुलिस का भी दायित्व नहीं है। पुलिस सिर्फ मानवता के आधार पर उसे बचा सकती है जो उसे करना चाहिये किन्तु पुलिस अन्य आवश्यक काम छोड़कर ऐसे मरने वालों को बचाने को प्राथमिकता दे यह ठीक नहीं।

मैं स्पष्ट हूॅ कि ऐसे स्टंटों या घटनाओं को बहुत प्रचारित करना वर्तमान आत्महत्या वृद्धि का कारण है,समाधान नहीं। ऐसे अनावश्यक महत्व विस्तार से बचना चाहिये।

3 सत्यपाल शर्मा,नवीनगर,बरेली,उत्तर प्रदेश ज्ञानतत्व 6894

प्रश्नः— सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश मार्कन्डेय काटजू ने गॉधी जी को ब्रिटिश एजेंट बताया। उन्होंने मुगल बादशाह अकबर को देश का असल राष्ट्र पिता बताया। काटजू के मुताबिक अकबर ने बहुत पहले जान लिया था कि भारत विविधता से भरा देश हैं और इसे एक रखने के लिए सभी धर्मो का समान आदर होना चाहिए।काटजू ने कहा है कि गॉधी ने देश को बहुत नुकसान पहुॅचाया। गॉधी ने राजनीति में धर्म को शामिल कर वांटो और राजकरो की ब्रिटिश नीति को आगे बढ़ाया। गॉधी अपने भाषण में रामराज,ब्रम्हृचर्य,गोरक्षा,वर्णाश्रम व्यवस्था जैसे हिन्दूवादी विचारों का जिक्र करते थे।इससे मुसलमान मुस्लिम लीग जैसे संगठनों की ओर आकर्षित हुए। गॉधी का हिन्दुओं के प्रति झुकाव था। गॉधी जी का नोआखाली जाना ढोंग था। पहले गॉधी ने धार्मिक उन्माद फैलाया फिर शांति मार्च किया। उपरोक्त विचारों के अतिरिक्त काटजू ने कहा है कि 90 प्रतिशत भारतीय मूर्ख हैं। वे भेड़ चाल में मतदान करते हैं। कटरीना कैफ को अगला राष्ट्रपति बनाना चाहिए। सुन्दर महिलाओं को राजनीति में आना चाहिए। काटजू के उपरोक्त विचारों पर आपके ओजस्वी विचार जानने की इच्छा है।

उत्तरः—मार्कन्डेय काटजू के विषय में आपने लिखा कि वे पूर्व न्यायाधीश हैं । न्यायाधीश होने से कोई विद्वान नही हो जाता, समझदार नही हो जाता। कभी कभी तो बुढापे मे अच्छे अच्छे विद्वान भी मूर्खो के समान अण्ड बंड बोलने लगते है। वैसे भी सच्चाई यह है कि जो अपने को न्यायाधीश कहते है वे न्यायाधीश न होकर सिर्फ कानून के अनुसार समीक्षा करते है। ये लोग गुण—धर्म के आधार पर समीक्षा न करते है न कर सकते हैं।मार्कन्डेय काटजू यदि पूरी तरह ठीक ठाक दिमाग मे भी रहते तो कानून विद ही कहे जा सकते हैं, समाजशास्त्री नहीं। मार्कन्डेय काटजू ने गॉधी तथा मुगल बादशाह अकबर के विषय में जो कुछ कहा वह उनका अधिकार था। यदि मैं किसी की प्रशंसा करुॅ तो कोई दूसरा उसकी आलोचना भी कर सकता है। मार्कन्डेय काटजू का नाम कहीं तटस्थ समीक्षक के रुप में विख्यात नहीं है। इसलिए ऐसे लोगों के उल जलूल कथन को आधार बनाकर कोई विचार बनाना गलत है। कोई व्यक्ति अपने निष्कर्षों को भी व्यक्त कर सकता है। अथवा मीडिया में बने रहने के लिए भी कुछ कह सकता हैं। यह भी संभव है कि भाजपा की चापलूसी के लिए गॉधी के विरुद्ध कुछ कह दिया जाए। काटजू ने इस कथन के कुछ ही दिनों बाद यह बयान भी दे दिया कि वे हमेशा गोमॉस खाते हैं और अब भी खाने में कोई बुराई नही समझते। इस बयान के बाद स्पष्ट हुआ कि काटजू जी का उद्देश्य भाजपा को खुश करना नही बल्कि स्वयं को चर्चा में बनाए रखना है अथवा बुढापे के प्रभाव से कुछ भी बोलना है। मैं काटजू के बयान को महत्वहीन मानकर गॉधी अकबर अथवा गोहत्या के मामलों में कोई उत्तर देना आवश्यक नहीं समझता हूॅ। इतना अवश्य है कि यदि और गम्भीर समीक्षक इस तरह की बात कहेगा तो मैं उसका उत्तर दूॅगा। मार्कन्डेय काटजू ने 90 प्रतिशत भारतीयों को मूर्ख कहॉ,मुझे तो लगता है कि भारत में 90 प्रतिशत लोग उचित अनुचित को समझते है और 10 प्रतिशत लोग ही ऐसे है जो मार्कन्डेय काटजू के समान है।

4 बेचू बी.ए.,कुशीनगर, उत्तर प्रदेश ज्ञानतत्व 4265

प्रश्नः— एक तरफ सरकार देश में 3600 से ज्यादा पशु वध शालाऍ वैधानिक रुप से चलवा रही है वहीं गैर सरकारी तौर पर 30,000 से ज्यादा पशु वध शालाऍ देश में कार्य कर रही है। एक नजर डाले तो 2012 में 36430 लाख मैट्रीक टन गौ मॉस का भारत में उत्पादन हुआ। वर्ष 2013,14 में इससे कहीं ज्यादा। इस पर प्रतिबन्ध को लेकर महात्मॉ गॉधी से लेकर राष्ट्रीय नेताओं सहित वर्ष 1967 में गोपाष्टगी के दिन दिल्ली में लाखों साधु महात्माओं ने आन्दोलन किए।1979 में आचार्य विनोवा भावे ने भी गौहत्या बंदी के लिए अनिश्चित कालीन अनशन शुरु किया था,लेकिन सब ढाक के तीन पात रहा और यह धन्धा तेज गति से आज भी चल रहा है। ऐसे में सरकार अब गाय को राष्ट्र माता घोषित किए जाने की वकालत कर रही है। देश के ग्रृहमंत्री सहित पुर्वांचल के हिन्दू नेता व गोरखपुर के सांसद योगी आदित्य महाराज जी ने भी गाय को राष्ट्र माता घोषित कराने के लिए अभियान चलाने की बात कहीं है।

क्या लगता नहीं कि यह सब हवा हवाई है। क्या सचमुच यह सरकार,घर,वापसी,लव जेहाद जैसे अन्य कई कार्यक्रमों की तरह आगे इस अभियान में फ्लाप साबित होगी।घर वापसी पर तो मोदी जी ने अल्पसंख्यकों के प्रति जो मरहम लगाने व उनके अस्मिता पर किसी भी प्रकार का चोंट न पहुॅचने की बात कहीं है। यह कह कर मोदी जी क्या दर्शाना चाहते है। कृपया आप अपना अमूल्य विचार विस्तृत रुप में दें अति कृपा होगी?

उत्तरः— गोहत्या के संबंध में बेचू भाई ने एक बात कही है। मैं समझता हूॅ कि उनके कथन में दम है। कई अच्छी योजनाऍ भविष्य में फ्लाप भी हो जाया करती है और सफल हो सकती हैं। योजना बनाते समय सतर्कता बर्तनी चाहिए, यही सही है किन्तु फ्लाप होने के डर से कोई योजना ही न बने यह ठीक नहीं। नरेन्द्र मोदी अनेक योजनाओं को आगे करके कुछ नये प्रयोग करने की पहल कर रहे है। इन प्रयोगों की सफलता असफलता का निष्कर्ष बाद में निकलेगा। गोहत्या बंदी के संबंध में मैं किसी कानून की अपेक्षा व्यावहारिक प्रयोग का पक्षधर हूॅ। मेरे विचार से दूध की कीमत बढ़नी चाहिए। कृत्रिम उर्जा का मूल्य बहुत अधिक बढ़ना चाहिए, कृत्रिम खाद का मुल्य भी बहुत बढ़ना चाहिए, और इन सब बढ़े हुए मुल्यों की तुलना करके सभी प्रकार के कृषि उत्पादों का मूल्य भी बढ़ाना चाहिए। गोपालन को जब तक लाभदायक व्यवसाय नहीं बनाया जाता, तब तक गोहत्या बंदी गोपालकों के लिए बोझ बन सकती हैं। बैलों की उपयोगिता बढ़े,गोबर की उपयोगिता बढ़े,दूध की मॉग बढ़े तब गोहत्या स्वतः ही कम हो सकती है। या कानून बनाकर भी रोका जा सकता है। मैं ऐसा मानता हूॅ कि भारत में समान नागरिक संहिता हो ।समान नागरिक संहिता लागू होने के बाद धर्म के आधार पर कोई कानून नहीं बनाया जा सकता,चाहे वह कितनी ही अच्छा क्यो न हो। दूसरी ओर उपयोगिता के आधार पर कोई भी कानून कभी भी बन सकता है।भले ही वह किसी धर्म के विरुद्ध ही क्यों न हो। कुछ लोग गोहत्या के मामले में तर्क दे रहें है कि इस कानून से भारत में मॉस का अभाव हो जायेगा। मुझे ऐसा नहीं लगता हैं। कुछ वर्षो में ही बकरे मुर्गे का उत्पादन इस कमी को पूरा कर देगा। जो बेरोजगार हो रहें है वे भी अन्य रोजगार में शामिल हो जायेंगे। फर्क यही पड़ेगा कि जीवित गाय, बछड़े के मॉस की जगह वृद्ध होकर मरने वाले गाय बैलो का मॉस उपलब्ध होगा। मॉस में कमी नही आयेगी, भले ही उस मॉस की क्वालिटी में कुछ कमी आ जाये। इसलिए ये अनावश्यक तर्क देकर गोहत्या बंदी के खिलाफ वातावरण बनाना गलत है। इतना अवश्य है कि धर्म के आधार पर कोई कानून न बनाकर उपयोगिता के आधार पर बनाना अधिक अच्छा होगा। अब तक गोहत्या बंदी के लिए जो आन्दोलन चलते रहें है वे सिर्फ धर्म के आधार पर चलते रहे है। इस आधार में उपयोगिता को भी शामिल कर लिया जाये।

मेरे विचार मे नरेन्द्र मोदी द्वारा प्रारंभ की गई कोई भी योजना अब तक असफल नही हुई है। भविष्य मे क्या होगा यह पता नही। इतना अवश्य है कि नरेन्द्र मोदी को परेशान करने के लिये मोहन भागवत द्वारा आगे की गई योजनाएं असफल हो रही है। इसका नरेन्द्र मोदी को दोष नही दिया जा सकता।

उत्तरार्ध

लोक स्वराज्य बिल

1. उद्देश्य : 'तंत्र', नियुक्त होने के आधार पर, 'स्वयं को सरकार' कहने या समझने के स्थान पर 'प्रबंधक' या 'मैनेजर' समझे तथा कहे। दूसरी ओर 'लोक' स्वयं को 'नियोक्ता होने' के आधार पर 'मालिक' समझे तथा कहे। 'लोकतंत्र' का अर्थ 'लोक नियुक्त तंत्र' के स्थान पर 'लोक नियंत्रित तंत्र' हो।

2. कार्य : प्रथम चरण मे चार कार्य किये जाये – 1. परिवार, गांव, जिले को संवैधानिक मान्यता तथा अधिकार, 2. लोक संसद, 3. राइट टू रिकाल, 4. प्रति व्यक्ति प्रतिमाह दो हजार मूल रूपया जीवन भत्ता

3. कार्यक्रम : राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, विपक्ष द्वारा नियुक्त एक व्यक्ति, सर्वोच्च न्यायाधीश तथा एक अन्य सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश,मिलकर व्यक्तिगत आधार पर अलग अलग चार आयोगों का गठन करें।ये चारों आयोग एक वर्ष के भीतर संसद को अपनी रिर्पोट दें।

4. आयोग के कार्य : प्रथम विषय : परिवार

क–परिभाषा

1 पिता, माता और नाबालिग संतान की वर्तमान परिभाषा

2 'संयुक्त संपत्ति' तथा 'संयुक्त उत्तर दायित्व' के आधार पर एक साथ रहने हेतु सहमत व्यक्तियो का समूह

3 कोई अन्य

ख–अधिकार

1 विवाह, सन्तानोत्पत्ति, सम्पत्ति विभाजनकर्ता की नियुक्ति, कर्ता के अधिकार,भोजन, वस्त्र, शिक्षा,रोजगार आदि के स्वतंत्र अधिकार ।

'गांव' क– परिभाषा

1 वर्तमान परिभाषा

2 एक सौ पचीस करोड आबादी के समय 750 से 1750 तक की आबादी को एक गांव या वार्ड घोषित करना जिससे पूरा देश दस लाख गॉवों में बंट जाये।

3 कोई अन्य

ख–अधिकार

शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ ,ग्रामीण सड़क, कुॅआ आदि जल व्यवस्था, साफ सफाई, स्थानीय स्तर की अर्थ व्यवस्था आदि।

'जिला'– क –परिभाषा : 1. वर्तमान 2. औसत सवा लाख की आबादी। 100 गांव को मिलाकर एक जिला

3 कोई अन्य

ख– अधिकार : एक से अधिक गांवो को एक साथ जोडने वाली ऐसी सडक, स्कूल, अस्पताल, पशु, चिकित्सा, जन्म–मृत्यु प्रमाण पत्र, जल प्रदाय, जिला स्तर तक की आर्थिक स्थिति आदि अनेक वे कार्य जो प्रदेश या केन्द्रीय व्यवस्था की न हो।

5. लोक संसद : द्वितीय विषय

क – निर्माण

1 रेन्डम प्रणाली से नियुक्त 543 प्रतिनिधि

2 संविधान सभा के नाम पर लोक सभा चुनाव के साथ ही दल विहीन पद्धति से चुने गये 543 प्रतिनिधि

3 सरकारी कालेजो के चुने गये एक सौ प्राचार्य जिन्हे बीए या उपर के सरकारी कालेजो के प्रोफेसर ही वोट दे । साथ ही पूर्व राष्ट्रपति, पूर्व प्रधान मंत्री तथा पूर्व सर्वोच्च न्यायाधीशो मे से संसद द्वारा चुने गये ग्यारह लोग जो किसी दल से न जुडे हों।

ख : कार्य

1 संविधान संशोधन में वर्तमान संसद के समान भूमिका

2 सांसदो के वेतन भत्तो के निर्धारण मे संसद के समान भूमिका

3 लोक पाल चयन

4 किन्ही दो संवैधानिक इकाइयों के बीच विवाद का निर्णय

5 कोई अन्य कार्य – जो विधायिका न्यायपालिका या कार्यपालिका से जुडा न हो

ग : विशेष

1 लोक संसद का चुनाव निर्दलीय आधार पर होगा।

2 लोक संसद का कोई स्थायी वेतन भत्ता नही होगा। आवश्यकतानुसार बुलाये जाने पर भत्ता देय होगा।

3 यदि संसद और लोक संसद किसी विषय 1 या 2 पर अंतिम रूप से असहमत होते है तो अंत में जनमत संग्रह से निर्णय होगा।

6 तृतीय विषय : राइट टू रिकॉल

क– लोक सभा के किसी सांसद की संसद सदस्यता संसद या दल समाप्त नही कर सकेगा।

ख –लोक सभा सांसद की सदस्यता समाप्ति के लिये निम्नाकित मे से कोई विधि होगी।

1 लोक सभा, संबद्ध राजनैतिक दल, संबंधित लोक सभा क्षेत्र के निर्वाचित ब्लाक अध्यक्ष, अथवा किसी अन्य व्यवस्था द्वारा विधिवत प्रस्ताव करने पर उस क्षेत्र के मतदाता, रेन्डम पद्धति से चुने गये मतदाता, सभी चुने गये पंच या सरपंच, अथवा किसी अन्य प्रणाली से कराये गये मतदान द्वारा निर्णय

7. चतुर्थ विषय : प्रति व्यक्ति प्रतिमाह दो हजार मूल रूपया जीवन भत्ता

क – परिभाषा :

1– व्यक्ति का अर्थ प्रत्येक व्यक्ति से होगा। उम्र लिंग आदि भेद नही किया जायगा

2 मूल रूपया का अर्थ है 23 जुन 2014 के बाद की मुद्रा स्फीति को जोडकर

3 कृत्रिम उर्जा का अर्थ है डीजल, पेट्रोल, बिजली, गैस, मिट्टी तेल, कोयला।

ख– व्यवस्थाः पूरी आबादी की न्यूनतम आधी निचली आबादी को प्रति माह प्रति व्यक्ति दो हजार मूल रूपया जीवन भत्ता सरकार द्वारा देय होगा।

ग– क्रमांक ख के लिये धन की व्यवस्था हेतु कोई एक व्यवस्था की जायेगी।

1 सम्पूर्ण सम्पत्ति पर समान कर

2 एक निश्चित सीमा से अधिक सम्पत्ति पर कर

3 कृत्रिम उर्जा की भारी मूल्य वृद्धि

4 कोई अन्य उपाय

8. यदि किसी आयोग की सलाह को संसद अंतिम रूप से अस्वीकार कर देगी तो जनमत संग्रह द्वारा अंतिम निर्णय होगा।